25

सन्नन्त प्रकरण

'सन्' एक प्रत्यय है। सन् प्रत्यय जिस धातु के अन्त में होता है वह धातु सन्नन्त-धातु कहलाती है। उन धातुओं का प्रकरण व्याकरण में सन्नन्त प्रकरण नाम से जाना जाता है। सन्नन्त धातु भ्वादि धातुओं से कोई अलग धातु नहीं है अपि तु भ्वादि से लेकर चुरादिगण तक जो दस गण के धातु हैं उन धातुओं से जब इच्छार्थक सन् प्रत्यय किया जाता है तब वे ही धातुएं सन्नन्तरूप को प्राप्त करती हैं। उन्ही सन्नन्त शब्दों की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। जैसे 'पठ व्यक्तायां वाचि' यह भ्वादिगणीय धातु है, उस से परे जब सन् प्रत्यय किया जाता है तब वो 'पिपठिष्' ऐसा नूतन रूप धारण कर लेती है और वह सन्नन्त धातु कहलाती है। इस प्रकार 'पिपठिष्' इस सन्नन्त की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। उसके मूलरूप 'पठ्' इसकी तो 'भुवादयो धातवः' (१.३.१) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है, इस भेद को अच्छी तरह से समझना चाहिए।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- सन्नन्तधातुओं की निष्पत्ति जान पाने में;
- सन्प्रत्यय विधायक सूत्र का अर्थ जान पाने में;
- पिपठिषति इस की रूपसिद्धि को जान सकेंगे और इसे जानकर और रूपों को भी बना पाने में;
- 'सन्' प्रत्यय के बाद उन उन स्थलों पर होने वाले कुछ विशेष कार्यों को भी जान पाने में;
- लोकव्यवहार के लिए उपयोगी शब्दों की प्रक्रिया भी उन उन सूत्रों में बताई गयी है जो आप जान पाने में।

टिप्पणियाँ

25.1 सनाद्यन्ता धातवः॥ (३.१.३२)

सूत्रार्थ - सन् आदि से लेकर णिङ्न्त प्रत्यय जिस के अन्त में हैं उन की धातु संज्ञा होती है।

सूत्र की व्याख्या - इस संज्ञा सूत्र में दो पद है। सनाद्यन्ताः(१/३), धातवः (१/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'सन् आदिः येषां ते सनादयः' ऐसा बहुव्रीहिसमास होता है। 'सनादयः अन्ते येषां ते सनाद्यन्ताः' यहाँ भी बहुव्रीहिसमास होता है।

सन्-क्यच्-काम्यच्-क्यङ्-क्यषोऽथाचारक्विब्-णिज्-यङस्तथा।
यगायेयङ्-णिङ् चेति द्वादशाऽमी सनादयः॥

सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, क्यष्, आचारक्विप्, णिच्, यङ्, यक्, आय, ईयङ्, णिङ् इन सबके आदि में सन् है। इसलिये इन्हें सनादि कहते हैं। ये प्रत्यय जिनके अन्त में होते हैं वे सनाद्यन्त धातु होते हैं। जैसे- कमेर्णिङ् इस सूत्र से कम् धातु से णिङ् प्रत्यय होता है। तब कम् + णिङ् बनने के बाद प्रक्रिया से 'कामि' शब्द निष्पन्न होता है। इस के अन्त में णिङ् है अतः यह सनाद्यन्त शब्द है। उसकी इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। सनादि णिङन्त प्रत्यय जिनके अंत में लगे हैं, वे धातुसंज्ञक होते हैं यह इस सूत्र का अर्थ है।

25.2 धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा॥ (३.१.७)

सूत्रार्थ - इच्छार्थक इष् धातु का जो कर्म हो और इष् धातु के साथ समानकर्तृक भी हो उस धातु से इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय विकल्प से होता है।

सूत्र की व्याख्या - इस विधि सूत्र में पांच पद हैं। धातोः(५/१), कर्मणः (५/१), समानकर्तृकात् (५/१), इच्छायाम् (७/१), वा (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। समानः कर्ता यस्य सः समानकर्तृकः, तस्मात् समानकर्तृकात् ऐसा बहुव्रीहिसमास होता है। गुप्तिज्किद्भ्यः सन् (३.१.५) इस सूत्र से सन् इस पद की अनुवृत्ति है।

इष् धातु का अर्थ है इच्छा इसलिये इष् धातु इच्छार्थक है। उस इष् धातु का कर्म जो धातु है अर्थात् इच्छार्थक इष्-धातुकर्मीभूत धातु से और इच्छा का जो कर्ता, वही कर्ता जिस धातु का हो उस इच्छा के समानकर्तृक धातु से परे इच्छार्थ में सन् प्रत्यय होता है। वह प्रत्यय विकल्प से होता है। इस प्रकार किसी धातु से परे तभी सन् प्रत्यय होता है जब ये दो विषय वहाँ हो। प्रथम जिस धातु से परे सन्प्रत्यय होगा वह अवश्य ही इष् धातु कर्म हो। दुसरा इष् धातु का जो कर्ता वही कर्ता इष्-धातुकर्मीभूत धातु का भी हो। जैसे की देवदत्तः पठितुम् इच्छति यहाँ इष् धातु का जो कर्ता देवदत्त वही पठ् धातु का भी कर्ता है। और पठ् धातु इष् धातु का कर्म भी है। अतः पठ् धातु से सन् प्रत्यय करने पर पिपठीषति ऐसा रूप होता है। इस सूत्र में विकल्पार्थक वा के ग्रहण से विकल्प से सन् प्रत्यय होगा अतः सन् प्रत्यय न होने के पक्ष में पठितुम् इच्छति यह वाक्य भी साधु है।

उदाहरण – पिपठिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – पठितुम् इच्छति इस विग्रह में पठ धातु से धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इस सूत्र से सन् प्रत्यय होता है। क्योंकि इष् धातु का जो कर्ता वही कर्ता पठ् धातु का भी है और पठ धातु इष् धातु का कर्म भी है। सन् के नकार की 'हलन्त्यम्' इस सूत्र से इत्संज्ञा, 'तस्य लोपः' इस सूत्र से उसका लोप होकर पठ + स होगा। इस स्थिती में धातोः इसके अधिकार में सन् प्रत्यय कहने से 'आर्धधातुकं शेषः' से सन् की अर्धधातुक संज्ञा होगी। इस स्थिति में 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' सूत्र से इड् आगम होगा। इड् आगम और अनुबन्धलोप होकर पठ्+इस् होगा इस स्थिती में अग्रिम सूत्र का आरम्भ होगा।

25.3 सन्यङोः॥ (६.१.९)

सूत्रार्थ – सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है, यदि वे अजादि हों तो उनके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र एक पदात्मक है। सन्यङोः यह षष्ठीद्विवचनान्त पद है। सन् च यङ् च सन्यङौ, तयोः सन्यङोः। यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। यहाँ 'एकाचो द्वे प्रथमस्य' और 'अजादेर्द्वितीयस्य' का अधिकार आ रहा है। सन् और यङ् दो प्रत्यय है। अतः 'प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्याः' इस नियम से सन् से सन्नन्त का और यङ् से यङन्त का ग्रहण होता है। सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् भाग को द्वित्व होता है, यदि धातु अजादि हों तो उनके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है। यह सूत्र का अर्थ है। अर्थात् हलादिधातु में प्रथम एकाच् को द्वित्व होगा, अजादिधातु में द्वितीय एकाच् को द्वित्व होगा ऐसा समझना चाहिए। इस प्रकार इस सूत्र से द्वित्व का विधान होता है।

विशेष – सन्नन्तरूप के लिए पहले सन्प्रत्यय का निर्णय करना चाहिए। उसके बाद इह विषयक विचार करना चाहिए। यदि मूल धातु सेट् है तो इइ होता है। अन्यथा नहीं होता। सन् यह अर्धधातुकप्रत्यय है यह भूलना नहीं चाहिए। इइ के विधान के बाद सन्नन्त समुदाय की धातुसंज्ञा करके द्वित्वविधान करना मुख्य कार्य है। यदि मूल धातु परस्मैपदी है तो सन्नन्त के बाद भी वह परस्मैपदी ही होगा। यदि मूलधातु आत्मनेपदी है तो वह सन्नन्त के बाद भी आत्मनेपदी ही होगा।

उदाहरण – पिपठिषति

सूत्रार्थसमन्वय – पठ + इस् ऐसी स्थिती में 'सन्यङोः' सूत्र से पठ् इसके प्रथम एकाच् को द्वित्व होगा। क्योंकि पठ् धातु हलादि है।उसके बाद पठ्+पठ्+इस् ऐसी स्थिति में प्रथम पठ् की अभ्यास संज्ञा होगी हलादि शेषः इससे हलादिशेष में प्रथम ठकार का लोप होकर पपठ् होगा। ऐसी स्थिति में द्वितीय इकार के बादके सकार का आदेशप्रत्यययोः इससे षत्व होगा। और पिपठ् + इष् ऐसी स्थिती में वर्णसम्मेलन करके पिपठिष यह रूप बनेगा। बाद में इस समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होगी। तत्पश्चात् लट्लकार के प्रथमपुरुष की अपेक्षा से तिप्, शप्, प्रत्यय और विकरण लगकर अनुबन्धलोप होकर पिपठ + इष + इति इस स्थिति में अतो

टिप्पणियाँ

गुणः इस सूत्र से पररूप होकर पिपठिषति यह रूप सिद्ध होगा। इस प्रकार ही भवितुम् इच्छति (होने की इच्छा) इस अर्थ में बुभूषति ऐसे रूप बना सकेंगे।

अत्तुम् इच्छति (खाने की इच्छा) इस अर्थ में अद् धातु से सन् प्रत्यय करने पर लुड्सनोर्घस्लु इस सूत्र से घस्लृ आदेश होकर घस् + स इस स्थिति में यह सूत्र प्रस्तुत होगा –

25.4 सः स्यार्धधातुके॥ (७.४.४९)

सूत्रार्थ – सकार आदि में है जिसके ऐसे आर्धधातुक के परे विद्यमान सकार के स्थान पर तकार आदेश होगा।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। सः (६/१), सि (७/१) आर्धधातुके (७/१) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'अच उपसर्गात्तः' इससे तः की अनुवृत्ति होती है। तकार के बाद विद्यमान अकार उच्चारण के लिए है। सि यह अर्धधातुके इसका विशेषण है। इसलिए यस्मिन् विधिस्तदादावल्ग्रहणे इस परिभाषा से तदादि विधि में सकारादि अर्धधातुक में यह अर्थ प्राप्त होता है। इस प्रकार सकार आदि में है जिसके ऐसे अर्धधातुक के परे विद्यमान सकार के स्थान पर तकार आदेश होगा यह सूत्र का अर्थ होगा।

उदाहरण – जिघित्सति।

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार घस् + स इस में आर्धधातुक सकार विद्यमान है। अतः प्रकृत सूत्र से सकार के स्थान पर तकार आदेश होकर घत्स ऐसा रूप बनेगा। उस के बाद प्रथम एकाच् भाग का 'सन्यङोः' सूत्र से द्वित्व होकर घत् घत्स ऐसा बनेगा। उस के बाद 'हलादिशेषे' इससे घ घत्स बनेगा। प्रथम घकार को 'अभ्यासे चर्च' सूत्र द्वारा जश्त्व आदेश होकर जकार होगा। 'सन्यतः' सूत्र से जकार के परे विद्यमान अकार का इत्व होकर जिघत्स रूप बनेगा। उसके बाद वर्तमानकाल में लट्लाकर के तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश होकर जिघत्सति ऐसा रूप सिद्ध होगा।

कर्तुम् इच्छति (करने की इच्छा) इस अर्थ में डुकृञ् करणे इस धातु से 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' सूत्र से सन्प्रत्यय कर कृ+स इस स्थिती में 'सनः आर्धधातुकत्वात्' सूत्र से इडागम प्राप्त होता है। परन्तु 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' यह सूत्र इडागम करने में बाधा निर्माण करता है। इसलिए उसके दीर्घविधान के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.5 अज्झनगमां सनि॥ (६.४.१६)

सूत्रार्थ – झलादि सन् के परे रहने पर अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। अज्झनगमाम् (६/३), सनि (७/१) ऐसा सूत्र गत पदों का पदच्छेद है। अच् च हन च गम् च अज्झनगमः, तेषाम् अज्झनगमाम्। ऐसा इतरेतरयोगद्वन्द्व

समास है। 'नोपधाया' इससे उपधाया पद की, 'अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति' इससे झलि इस पद की, 'ह्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' इससे दीर्घ पद की यहाँ अनुवृत्ति होती है। यहाँ 'अङ्गस्य' इस सूत्र का अधिकार है। अच् यह 'अङ्गस्य' का विशेषण है अतः तदन्तविधि होकर अजन्त अङ्ग का ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। झलि यह सनि का विशेषण है। अतः तदादिविधि होकर झलादि सन् के परे रहते ऐसा अर्थ होगा। इङश्च इससे विहित गम् धातु ही लिया जायेगा न कि गम्लृ गतौ धातु। जहाँ पर दीर्घ आदि का विधान होता है, वहाँ अचश्च इस परिभाषा से अचः स्थाने ऐसा अर्थ बन जाता है। अनुवृत्ति से प्राप्त उपधायाः इसका अन्वय हन् और गम् धातु के साथ ही होगा न कि अच् के साथ। क्योंकि अजन्त धातुओं में दीर्घ योग्य उपधावर्ण नहीं होता। इस प्रकार सूत्रार्थ होगा झलादि सन् के परे रहने पर अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ आदेश होता है।

उदाहरण – चिकीर्षति।

सुत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार कृ स यहाँ इण् निषेध होने पर सन् झलादि है और भी यहाँ कृ यह अजन्त का अङ्ग भी है। अतः प्रकृतसूत्र से दीर्घ कृ+स बन जायेगा।

इस प्रकार कृ+स इस स्थिति में सन् के आर्धधातुक होने से सार्वाधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण प्राप्त होने पर अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.6 इको झल्॥ (१.२.९)

सूत्रार्थ – इगन्त धातु से परे झलादि सन् कित्वहभाव को प्राप्त होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह आदेश सूत्र दो पदों का है। इकः (५/१), झल् (१/१) यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। असंयोगाल्लिकित् इससे कित् की और रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इससे सन् की अनुवृत्ति आती है। सन् प्रत्यय धातु से ही होता है अतः सन् इससे धातु का आक्षेप होता है। उसी आक्षिप्त धातोः इस विशेष्य का विशेषण इकः यह है। अतः तदन्तविधि होकर इगन्त धातु से ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। और झल् सन् का विशेषण है। अतः तदादिविधि होकर झलादि सन् ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। इस प्रकार इगन्त धातु से परे झलादि सन् कित्वहभाव को प्राप्त होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। इस सूत्र से कित्वहभाव का विधान किया जाता है। कित्वहभाव का प्रयोजन है गुण का निषेध करना।

उदाहरण – चिकीर्षति।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार कृ+स इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से कित्व होगा। क्योंकि कृ यह इगन्तधातु है। और स यह झालदि सन् है। कित्व के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुण निषेध होता है। 'ऋत इद्धातोः' सूत्र से ऋकार को इकार आदेश होगा। रपरत्व होकर 'हलि च' इससे उपधाभूत इक वर्ण को दीर्घ आदेश होगा। 'आदेशप्रत्यययोः' इस सूत्र से सकार का षत्व होकर कीर्ष ऐसा रूप होता है। उसके बाद सन्यङोः इस सूत्र से सन्नन्तधातु के प्रथम एकाच की, को द्वित्व होकर, हलादिशेषे ह्रस्व होकर, 'कहोच' सूत्र से ककार के स्थान पर चवर्ग आदेश होगा। चकार आदेश होकर चिकीर्ष

ऐसा सन्नन्त रूप बनेगा। उसके बाद सनाद्यन्ता धातवः से उसकी धातुसंज्ञा होगी। वर्तमानकाल में लट् लकार के तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश होकर चिकीर्षति ऐसा रूप सिद्ध होगा।

कर्तृऽभिप्राय में क्रियाफल में आत्मनेपदप्रत्यय होकर चिकीर्षति ऐसा रूप बनेगा।

पाठगत प्रश्न 25.1

1. पिपठिषति यहाँ मूलधातु कौन सी है और सन्नन्तधातु कौन सी है?
2. पिपठिषति यहाँ सन्नन्त की धातु संज्ञा किससे होती है?
3. सन्प्रत्यय किस अर्थ में होता है?
4. सन्धातु क्या नित्य होती है?
5. पिपठिषति इसका क्या अर्थ है?
6. सः स्यार्धधातुके इसका उदाहरण क्या है?
7. चिकीर्षति यहाँ दीर्घ किससे हुआ?
8. सन् के कित्वद्भाव का एक प्रयोजन लिखिए।
9. सनादि कौन से होते हैं, लिखिए।
10. भवितुमिच्छति इस अर्थ में क्या रूप होता है?

भवितुम् इच्छति (होने की इच्छा) इस अर्थ में भूधातू से सन् प्रत्यय होकर भू + स होगा। इस स्थिति में भूधातु ऊदन्त होने से सेट् है अतः सन् के अर्धधातुक होने के कारण 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' इस सूत्र से इडागम प्राप्त होता है जिसका निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रस्तुत है।

25.7 सनि ग्रहगुहोश्च॥ (७.२.१२)

सूत्रार्थ – ग्रह गुह और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् आगम नहीं होता।

सूत्र की व्याख्या – यह निषेधसूत्र तीन पदों का है। सनि (७/१), ग्रहगुहोः (६/२) च (अव्ययम्) यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। ग्रहश्च गुह च ग्रहगुहौ, तयोर्ग्रहगुहोः ऐसा यहाँ इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। यहाँ पञ्चमी अर्थ में षष्ठी प्रयुक्त है। 'नेड् वशि कृति' इससे न और इट् की अनुवृत्ति है और चकार से 'श्युकः किति' इससे उक् का अनुकर्षण किया जाता है। इडागम सन् से होता है न कि धातु से। अतः सनि इसका षष्ठन्त्य रूप से परिवर्तन किया जाता है। यहाँ 'अङ्गस्य' इस सूत्र का अधिकार है। उकः यह 'अङ्गस्य' का विशेषण है। अतः तदन्तविधि होकर उगन्तात् अङ्गात्

ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। ग्रह गुह और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् आगम नहीं होता यह सूत्रार्थ होता है। इस प्रकार इस सूत्र से इडागम के अभाव का विधान किया जाता है।

उदाहरण – बुभूषति।

सूत्रार्थसमन्वय – भू धातु से सनि प्रत्यय होकर भू+ स यह बन जायेगा। भू धातु उगन्त है अतः प्रकृतसूत्र से सन् को इडागम नहीं होगा। उसके बाद 'सन्यङोः' सूत्र द्वारा द्वित्व, हलादिशेष, ह्रस्व होकर भुभू + स यह रूप होगा। ततः 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' इससे आर्धधातुक में गुण प्राप्त होगा। इस स्थिति में 'इको झल्' इस सूत्र से झलादि सन् के कित्व के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध होगा। ततः 'अभ्यासे चर्च' सूत्र से अभ्यास भकार का जश्त्व होगा। 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से सन् के सकार का षत्व होकर बुभूष ऐसा रूप होगा। ततः उसके सन्नन्त समुदाय के कारण सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) सूत्र से धातुसंज्ञा होगी। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश से बुभूषति ऐसा रूप सिद्ध होगा। बुभूषतः बुभूषन्ति इत्यादि स्थल में भी समान प्रक्रिया है यह जानना चाहिए।

ग्रहधातु का उदाहरण जिघृक्षति। गुधातु का उदाहरण जुघुक्षति।

इण गतौ इस धातु से एतुमिच्छति के अर्थ में सन् प्रत्यय होकर इ+स ऐसी स्थिति होनेपर यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.8 सनि च॥ (२.४.४७)

सूत्रार्थ – सन् परे रहते इण् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है, किन्तु बोधन अर्थ होने पर उक्त आदेश नहीं होगा।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पादों का है। सनि (७/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। गा लुङि से इणः की, णौ गमिरबोधने से गमिः, अबोधने की अनुवृत्ति आती है। इण् धातु के स्थान पर गमि ऐसा आदेश होता है सन् प्रत्यय के परे रहते। किन्तु बोधनार्थ में वह आदेश नहीं होता। गमि यहाँ इकार इत्संज्ञाक है, अतः गम् इतना ही बचता है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा गमि ऐसे आदेश होगा।

उदाहरण – जिगमिषति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार इण्धातु से सन् प्रत्यय के परे रहने पर इ+ स कि स्थिती में प्रकृतसूत्र द्वारा गमि आदेश होगा। क्योंकि यहाँ इण्धातु है और वह बोधनार्थक भी नहीं है। उसके बाद अनुबन्ध लोप होकर गम्+स इस स्थिति में गमेरिट् परस्मैपदिषु से सकारादि आर्धधातुकप्रत्यय सन को इडागम होगा। इडागम से धातु को द्वित्व होगा। द्वित्व हलादिशेष अभ्यासजश्त्व होकर जगम+इस यह बनेगा। उसके बाद सन्यतः से अभ्यास अकार का इत्व होकर सन के सकार का षत्व होकर जिगमिष रूप बनेगा। ततः लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश से जिगमिषति ऐसा रूप सिद्ध होगा। इस प्रकार जिगमिषतः जिगमिषन्ति

टिप्पणियाँ

में भी समान प्रक्रिया होगी। प्रति उपसर्गपूर्वक इण्धातु से सन्नन्त में प्रतीतिषिषति ऐसा जो रूप होता है वहाँ इण्धातु से गमि यह आदेश नहीं होता। क्योंकि यहाँ बोधन अर्थ है। लिखितुमिच्छति (लिखने की इच्छा से) इस अर्थ में लिख् धातु से सन् प्रत्यय होता है। सन के आर्धधातुक होने से 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' से इडागम होकर लिख + इस होगा। इस स्थिति में सन्यङोः इस सूत्र से धातु को द्वित्व होकर लिख लिख + इस तरह यह बनेगा। ततः हालादिशेष अभासह्रस्व से लि लिख + इस बनेगा। इस स्थिति में लघु उपधगुण प्राप्त होने पर उसका निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.9 रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च॥ (१.२.२६)

सूत्रार्थ – उकारोपध या इकारोपध रलन्त हलादि धातुओं से परे इट् से युक्त क्त्वा और् सन् को विकल्प से कित्त्व होता है।

सूत्र की व्याख्या – इस अतिदेशसूत्र में पांच पद हैं। रलः (५/१) व्युपधात् (५/१) हलादेः (५/१) सन (१/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। उश्च इश्च वी, ते उपधे यस्य स व्युपधः तस्मात् व्युपधात्, ऐसा द्वन्द्वगर्भ बहुव्रीहिसमास है। नोपधात्थफान्ताद्वा से वा की, न क्त्वा सेट् से सेट् की, असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की, पूङः क्वा च से क्त्वा की अनुवृत्ति आती है। इस प्रकार धातु की उपधा में इकार अथवा उकार हो, धातु के अन्त में रल्प्रत्याहार का कोई वर्ण विद्यमान हो, और धातु हलादि हो, क्त्वा या सन् को इट् आगम हुआ हो तो क्त्वा और सन् को विकल्प से कित्त्व होता है यह सूत्र का सम्पूर्ण अर्थ है। इस प्रकार इस सूत्र से वैकल्पिक कित्त्व का विधान किया जाता है।

उदाहरण – इकारोपधा का उदाहरण – लिलिखिषति, लेलिखिषति।

उकारोपधा का उदाहरण – रुरुचिषते, रुरोचिषते।

सूत्रार्थसमन्वय – लिख् अक्षरविन्यास से यह धातु इकारोपध, हलादि, रलन्त है। अतः लिख धातु से सन्प्रत्यय करने पर द्वित्वादिकार्य होकर लि लिख + इस ऐसा रूप बनता है। इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से इस इसका किद्वद्भाव होकर लघूपधगुणनिषेध होकर लिलिख स ऐसा बनता है। ततः आदेशप्रत्यययोः से सकार का षत्व होकर लि लिखिष यह बनता है। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर लिलिखिषति ऐसा रूप बनेगा। कित्त्व के अभाव पक्ष में लघूपधगुण होता है तब लिलेखिषति ऐसा रूप भी बनता है।

अब उकारोपधा धातु के विषय में कहते है। रुच् दीप्तावभिप्रीतौ च यह धातु आत्मनेपदी उकारोपध, हलादि, रलन्त है। रोचितुम् इच्छति इस अर्थ में रुचधातु से सन् प्रत्यय इडागम होकर धातु का द्वित्व हलादिशेष से रुरुच्+ इस ऐसा रूप बनेगा। प्रकृतसूत्र से विकल्प से किद्वद् भाव में लघूपधा गुणनिषेध करके आदेशप्रत्यययोः से सकार का षत्व होकर रुरुचिष यह रूप होगा। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि, शपि प्रत्यय और विकरण लगकर

रुरुचिषते ऐसा रूप बनेगा। कित्त्वाभाव पक्ष में तो लघूपधागुण होता ही है। तब रुरोचिषते ऐसा रूप भी होगा।

भेत्तुम् इच्छति (विदारण करने की इच्छा से) इस अर्थ में भिदिर विदारणे धातु से सन्प्रत्यय करने पर भिद् स यह रूप बनता है। तत: यह धातु अनिट् है अत: इडागम नहीं होगा। तत: भिद् का द्वित्व होकर हलादिशेष अभ्यास जश्त्वादि कार्य करके बिभिद् + स यह रूप होगा। तत: सन् के आर्धधातुक होने से लघूपधागुण प्राप्त होने पर इस अतिदेश सूत्र का प्रारम्भ होता है।

25.10 हलन्ताच्च॥ (१.२.१०)

सूत्रार्थ – इक् के समीप में विद्यमान हल् से परे झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है।

सूत्रव्याख्या – यह दो पदों का अतिदेशसूत्र है॥ हलन्तात् (५/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। इको झल् इस सूत्र की अनुवृत्ति है। असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की अनुवृत्ति है। रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छ: संश्च से सन् कि भी अनुवृत्ति है। अत: इक् के समीप में विद्यमान हल् से परे झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। सूत्र में प्रयुक्त अन्त पद का समीप ऐसा अर्थ है। इस सूत्र से कित्त्व का विधान किया जाता है।

ब् बिभित्सति, बिभित्सते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार भिद् धातु से सन्प्रत्यय द्वित्वादि कार्य करके बिभिद् यह रूप बनता है इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है। क्योंकि यहा इक् है इकार उसका समीपवर्ती हल् होता है दकार। तत: क्ङिति च से लघूपधागुण निषेध होता है। तत: खरि च से चर्त्व होकर बिभित्स यह धातु बनता है। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर बिभित्सति ऐसा रूप बनेगा। मूलधातु उभयपदी है अत: सन्नन्तधातु भी उभयपदी होगा। अत: एक पक्ष में बिभित्सते ऐसा भी रूप होता है।

तुदादिगणिय कृ गु धातुओं से 'इट् सनि वा' सूत्र से विकल्प से इट् प्राप्त है अपि तु 'दृङ्-धृङ्प्रच्छ धातुओं से 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' सूत्र से आर्धधातुक इ का निषेध होता है। अत: इस सब का निषेध कर इडागम के विधानार्थ यह सूत्र प्रस्तुत है।

25.11 किरश्च पञ्चभ्य:॥ (७.२.७५)

सूत्रार्थ – कृ ,गृ, दृङ् ,धृङ् और प्रच्छ धातुओं से परे सन् को इड् आगम होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। किर: (१/१) च (अव्ययम्) पञ्चभ्य: (५/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'इडत्यर्तिव्ययतीनाम्' से इट् कि, 'स्मिपूङ्ञ्ज्वशां सनि' से सनि कि अनुवृत्ति आती है। कृ, गृ, दृङ्, धृङ् और प्रच्छ धातुओं से परे सन् को इड् आगम होता है यह सूत्र का अर्थ है।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – जिगरिषति, जिगलिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – गरितुं गलितुमं वा इच्छति (निगलने की इच्छा करता है) इस अर्थ में गघ् निगरणे धातु से सन् प्रत्यय होगा। सन के आर्धधातुक होने से आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इडागम होगा। उस इडागम का 'सनि ग्रहगुहोश्च' से निषेध प्राप्त होता है। पुनः उसका निषेध कर इट् सनि वा से विकल्प से इट् आगम की प्राप्ति हुई। उसका भी निषेध करके किरश्च पञ्चभ्यः से नित्य इडागम हुआ। क्योंकि यहाँ कृ धातु है। उससे विहित सन् भी है। उसके बाद ग इसका द्वित्व होकर गूग + इस यह रूप होगा। इस स्थिति में उरत् सूत्र से अभ्यास ऋकार को अकार आदेश, रपरादि से जगृ+इस यह रूप बना। इस स्थिति में 'वृतो वा' से विकल्प से इट् के इकार को दीर्घत्व प्राप्त है 'चास्येटो दीर्घत्वं नेच्छन्ति' इस वचन से तस्य बाध होता है। ततः 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' इससे ऋकार को गुण होकर जगृ+इस यह रूप बनता है। इस स्थिति में अभ्यासाकार को इत्व 'आदेशप्रत्यययोः' से सकार को षत्व होकर जिगरिष यह बनता है। ततः लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर जिगरिषति ऐसा रूप बनेगा। इट् के परे रहते 'अचि विभाषा' से सर्वत्र रेफ को विकल्प से लत्व हो जाता है। अतः जिगलिषति ऐसा रूप भी बनता है।

इस प्रकार ही करितुम् (करीतुम्) इच्छति इस अर्थ में कृ विक्षेपे इस धातु से सनादिकार्य कर चिकरिषति ऐसा रूप सिद्ध होता है।

वैसे ही धर्तुमिच्छति इस अर्थ में धृङ् अनवस्थाने धातु से सनादि कार्य करने के पश्चात् दिधरिषते ऐसा रूप होता है।

प्रच्छ जीप्सायाम् धातु से प्रष्टुमिच्छति इस अर्थ में सन्नन्त में धातु के अनिट् होने के कारण इड् आगम अप्राप्त है। तब किरश्च पञ्चभ्यः इस विशेष सूत्र से नित्य इडागम करके द्वित्वादिकार्य करने पर पिपृच्छति ऐसा रूप बनता है।

अध्येतुम् इच्छति इस अर्थ में नित्य अधिपूर्वकात् इ अध्ययने इस अदादिगणीय धातु से 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' सूत्र से सन् करके इ+ स इस स्थिति में अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.12 इङश्च॥ (२.४.४८)

सूत्रार्थ – सन् परे रहने पर इङ् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। इडः (५.१) च ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। णौ गमिरबोधने से गमिः की, सनि च से सनि की अनुवृत्ति आती है। सन् परे रहने पर इङ् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है यह सूत्र का अर्थ होता है। गमि यहाँ इकार की इत्संज्ञा होने से गम् मात्र अवशिष्ट रहता है।

उदाहरण – अधिजिगांसते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार नित्य अधिपूर्वक इ धातु से सन् प्रत्यय करने पर इङश्च सूत्र से गमि आदेश होकर अनुबन्ध लोप होकर अधिगम् + स यह बनेगा। ततः अज्झनगमां सनि सूत्र से उपधा दीर्घ होकर गाम्+स रूप बनेगा। मूलधातु ङित् है अतः अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से आत्मनेपदी होगा। इसके फलस्वरूप पूर्ववत्सनः से सन्नन्तरूप भी आत्मनेपद होगा। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, सन्यतः से अभ्यास अकार का इत्व और मकार का अनुस्वार होकर अधि+जिगांस यह रूप बनेगा। इस स्थिति में प्रत्यय लगने अधिजिगांसते यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 25.2

1. इडश्च इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. सनि च इसका क्या अर्थ है?
3. प्रष्टुमिच्छति इस अर्थ में प्रच्छधातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या रूप होता है?
4. किरश्च पञ्चभ्यः इससे क्या होता है?
5. हलन्ताच्च इससे क्या विधान होता है?
6. ग्रहद् धातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या उदाहरण है?
7. गुहद् धातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या उदाहरण है?
8. रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च इस सूत्र से विधीयमान कित्त्व क्या नित्य है अथवा अनित्य?

तनितुम् इच्छति इस अर्थ में तनु विस्तारे इस उभयपदी धातु से सन् प्रत्यय करने पर तन्+स इस स्थिति में तनिपतिदरिद्रातिभ्यः सनो वा इइवाच्यः इस वार्तिक से विकल्प से इट् आगम होगा। इट्पक्ष में तन इ + स स्थिति में धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, अभ्यास अकार को इत्व आदि प्रक्रिया से तितास ऐसा सन्नन्त रूप होगा। ततः सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) से उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर तितनिषति ऐसा रूप बनेगा। जब इट् का अभाव होगा तब तन् + स इस स्थिति में यह सूत्र प्रवृत्त होगा।

25.13 तनोतेर्विभाषा॥ (६.४.१७)

सूत्रार्थ – झलादि सन् के परे रहते तन् धातु की उपधा को विकल्प से दीर्घ आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। तनोतेः (६/१) विभाषा (१/१) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'नोपधायाः' से उपधायाः की, 'ह्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' से दीर्घः की अनुवृत्ति आती है। झलादि सन् के परे रहते तन् धातु की उपधा को विकल्प से दीर्घ आदेश होता है यह समग्र सूत्र का अर्थ होगा।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – तितांसति, तितंसति।

सूत्रार्थसमन्वय – तन् धातु से सन् होने पर तन् + स बनेगा इस स्थिति में तनोतेर्विभाषा इससे उपधाभूत अकार को दीर्घ होकर तान् + स बनेगा। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, अभ्यास अकार को इत्व होकर तितान् + स बनेगा। इस स्थिति में नश्चापदान्तस्य झलि सूत्र से नकार को अनुस्वार होकर तितांस बना। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर तितंसति ऐसा रूप बनेगा। तप्रत्यय से तितंसते रूप ऐसे साकल्य से षट् रूप होते हैं।

देवितुम् इच्छति इस अर्थ में दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहार-स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु धातु से सन् होनेपर दिव+ स इस स्थिति में यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.14 सनीवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्॥ (७.२.४९)

सूत्रार्थ – इवन्त ऋधादि धातुओं से परे सन् को विकल्प से इड् आगम होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। सनि (७/१) इवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम् (६/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। इव् अन्ते येषां ते इवन्ताः, इवन्ताश्च ऋधश्च भस्जश्च दम्भुश्च श्रिश्च स्वृश्च युश्च ऊर्जुश्च भरश्च ज्ञपिश्च सन् च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे इवन्तध 'भस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनः तेषां इवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्, ऐसा यहाँ बहुव्रीहिगर्भ द्वन्द्वसमास है। 'स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा' से वा की, 'इण्निष्ठायाम्' से इट् की अनुवृत्ति आती है। जिस के अन्त में इव् है वह धातु इवन्त कहा जाता है जैसे दिव सिव इत्यादि। इवन्त धातुओं से और ऋध-भस्ज्-दम्भ-श्रि-स्वृ-यु-ऊणु-भर-ज्ञप्-सन् धातुओं से परे सन् को विकल्प से इड् आगम होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। इस सूत्र से वैकल्पिक इडागम का विधान किया जाता है। प्रकृतसूत्र से जब इट् नहीं होता तब हलन्ताच्च इससे किद्वद्भाव के कारण गुणनिषेध होगा यह जानना चाहिए।

उदाहरण – अब क्रमश उदाहरण देखेंगे।

इवन्त – दिव् धातु से सन् होने पर प्रकृतसूत्र से वैकल्पिक इडागम होकर दिव + इस बनेगा। इस स्थिति में दिव धातु से द्वित्व हलादिशेष होकर दिदिव+इस बनेगा। ततः लघूपधागुण और सन् के सकार को षत्व होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर दिदेविषति ऐसा रूप बनेगा। इडाभाव पक्ष में हलन्ताच्च से सन् को किद्वद्भाव होकर गुणनिषेध होता है। च्छ्वोः शूडनुनासिके च सूत्र से धातु के वकार को ऊठ् आदेश होकर दि ऊ स बनेगा। इस स्थिति में इको यणचि से यण् होकर अज्झनगमा सनि से दीर्घ द्यू स बनेगा। ततः द्यू को द्वित्व हलादिशेष अभ्यास ऊकार को ह्रस्व सकार को षत्व तिबादि कार्य होकर दुद्यूषति रूप सिद्ध होगा।

ऋध्धातु का उदाहरण – अर्धितुमिच्छति ईसति, अदिधिषति।

भ्रस्जधातु का उदाहरण – बिभज्जिषति, बिभर्जिषति, बिभक्षति।

दम्भधातु का उदाहरण – धिप्सति, धीप्सति, दिदम्भिषति।

श्रिधातु का उदाहरण – शिश्रीषति, शिश्रयिषति।

स्वृधातु का उदाहरण – सुस्वर्षति, सिस्वरिषति।

युधातु का उदाहरण – युयूषति, यियविषति।

ऊर्णधातु का उदाहरण – ऊर्जुनूषति, ऊर्जुनविषति, ऊर्जुनविषति।

भृधातु का उदाहरण – बुभूषति, बिभरिषति।

ज्ञप्धातु का उदाहरण – जीप्सति, जिज्ञपयिषति।

सन्धातु का उदाहरण – सिषासति, सिसनिषति।

हलन्ताच्च से किद्वद्भाव में गुणनिषेध प्राप्त होने पर उसका भी निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.15 मुचोऽकर्मकस्य गुणो वा॥ (७.४.५७)

सूत्रार्थ – सकारादि सन् के परे रहते अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र चार पदों का है।

सूत्रार्थसमन्वय – मुचः (६/१) अकर्मकस्य (६/१) गुणः (१/१) वा यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। सः स्यार्धधातुके से सि की, सनि मीमाघुरभलभशकपतपदामच इस से सनि की अनुवृत्ति आती है। सूत्र में गुण शब्द कहकर गुण का विधान किया है। अतः इको गुणवृद्धी इस परिभाषा के बलपर इकः की उपस्थिति है। सकारादि सन् का तात्पर्य है इट् रहित सन्। इस प्रकार सकारादि सन् के परे रहते अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है यह सूत्रार्थ होगा।

उदाहरण – मोक्षते, मुमुक्षते वा वत्सः स्वयमेव। (बछडा अपने आप मुक्त होना चाहता है।)

सूत्रार्थसमन्वय – मुच्लृ मोक्षणे यह धातु सकर्मक है किन्तु कर्मकर्ता होने पर या कर्म की विवक्षा न होने पर यह अकर्मक होता है। एवं मोक्तुमिच्छति स्वयमेव इस अर्थ में मुच् धातु को प्रकृतसूत्र से विकल्प से गुण होकर मोच+स बनेगा। क्योंकि यहाँ अकर्मक मुच् धातु है और सकारादि सन् प्रत्यय है। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व होकर अत्र लोपोऽभ्यासस्य से पूरे अभ्यास का लोप होकर मोच + स बनेगा। इस स्थिति में चोः कुः से कुत्व होकर सकार को षत्व होकर मोक्ष रूप सिद्ध होगा। उसकी सनाद्यन्ता धातव (३.१.३२) से धातु संज्ञा होगी। कर्मकर्तृ होने पर धातु स्वतः आत्मनेपदी रहती है। पूर्वत्सनः नियम से लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर मोक्षते ऐसा रूप बनेगा। गुणाभाव पक्ष में मुमुक्षते इस प्रकार दो रूप होंगे।

टिप्पणियाँ

हलन्ताच्च इससे रुद् विद् मुष् सन को कित्व होगा, रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च से विकल्प से कित्व होगा इन दोनों का निषेध करने के लिए अर्थात् प्रतिप्रसव के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होगा। परं ग्रहधातु से न क्त्वा सेट् सूत्र से प्रतिनिषेध का निषेध करने के लिए अग्रिमसूत्र प्रवृत्त होता है।

यद्यपि स्वप्-प्रच्छ धातुओं से परे क्त्व कित्व है तथापि सन का कित्व नहीं है अतः अप्राप्त कित्व के विधान के लिए यह शास्त्र प्रवृत्त होता है।

25.16 रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च॥ (१.२.८)।

सूत्रार्थ – रुद्-विद-मुष्-ग्रह-स्वप्-प्रच्छ धातुओं से परे सन् और क्त्वा को किद्वद्भाव होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह अतिदेशसूत्र तीन पदों का है। रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः (५/१) सन् (१/१) च यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। रुषश्च विदश्च मुषश्च ग्रहिश्च स्वपिश्च प्रच्छ च तेषां समाहारद्वन्द्वे रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छ, तस्मात् रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः। यहा द्वन्द्वसमास है। चकार समुच्चयार्थक है। पूर्वसूत्र से अर्थात् मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा से क्त्वा का समुच्चय है। असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की अनुवृत्ति आती है। एवं पूर्वोक्त सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है। इसप्रकार इस सूत्र से कित्व का विधान किया जाता है।

उदाहरण – रुरुदिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – रोदितुम् इच्छति इस अर्थ में रुदिरअश्रुविमोचने धातु से सन् प्रत्यय करने पर इडागम, रुद् को द्वित्व, हलादिशेष होकर रु रुद् इस प्रकार बनेगा। ततः सन्यतः से अभ्यास के अकार को इत्व होकर रु रुद इस बनेगा। इस स्थिति में सन् अर्धधातुक होने से 'यदागमास्तद्गुणीभूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते' इस परिभाषा से उसके आगम का भी आर्धधातुकत्व होता है अतः पुगन्तलघूपधस्य इस सूत्र से गुण प्राप्त होता है। प्रकृत सूत्र से सन् का किद्वद्भाव हो जाने से 'क्ङिति च' से गुण का निषेध होता है। ततः आदेशप्रत्यययोः से सकार को षत्व होकर रुरुदिष बनेगा। उसकी सनाद्यन्ता धातव (३.१.३२) से धातुसंज्ञा होगी। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर रुरुदिषति ऐसा रूप बनेगा।

इस प्रकारहि वेदितुम् वेत्तुम् वा इच्छति इस अर्थ में विद् धातु से सन् प्रत्यय करने पर विविदिषति, मोषितुमिच्छति इस अर्थ में मुष स्तेये इस धातु से सन् प्रत्यय करने मुमुषिषति होगा यह जानना चाहिए। ग्रहीतुमिच्छति इस अर्थ में ग्रह उपादाने इस धातु से सन् प्रत्यय करने जिघृक्षति ऐसा रूप होगा। यहाँ सन् के किद्वद्भाव का फल गृहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से रेफ का संप्रसारण है।

स्वप्तुमिच्छति इस अर्थ में नि ष्वप शये धातु से सन् प्रत्यय करने पर सुषुप्सति ऐसा रूप होगा। यहाँ सन् के किद्वद्भाव का फल वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से वकार संप्रसारण है।

अब आपके बोध सौकर्य के लिए लट् लकार में कुछ सन्नन्त रूप नीचे तालिका में दर्शायें गये हैं-

धातुः	सन्नन्तार्थः	सामान्यरूपाणि	लटि सन्नन्तरूपाणि
अर्च्	पूजने की इच्छा करना।	अर्चति	अर्चिचिषति
आप्	पाने की इच्छा करना	आप्नोति	ईप्सति
अधिइङ्	पढने की इच्छा करना।	अधीते	अधिजिगांसते
कथ्	कहने की इच्छा करना	कथयति	चिकथयिषति-ते
कृ	करने की इच्छा करना	करोति	चिकीर्षति
खाद्	खाने की इच्छा करना	खादति	चिखादिषति
गम्	जाने की इच्छा करना	गच्छति	जिगमिषति
गृ	निगलने की इच्छा करना	गिरति, गिलति	जिगरिषति जिगलिषति
ग्रह्	ग्रहण करने की इच्छा	गृह्णाति	जिघृक्षति-ते
घा	सूंघने की इच्छा करना	जिघति	जिघासति
चल्	चलने की इच्छा करना	चलति	चिचलिषति
चि	चयन करने की इच्छा	चिनोति	चिचीषति
छिद्	काटने की इच्छा करना	छिनत्ति	चिच्छित्सति-ते
चुं	चुराने की इच्छा करना	चोरयति	चुचोरयिषति-ते
जि	जीतने की इच्छा करना	जयति	जिगीषते
ज्ञा	जानने की इच्छा करना	जानाति	जिज्ञासते
तृ	तरने की इच्छा करना	तरति	तितीर्षति
दृश्	देखने की इच्छा करना	पश्यति	दिदृक्षते
पच्	पकाने की इच्छा करना	पचति	पिपक्षति-ते
पा	पीने की इच्छा करना	पिबति	पिपासति
बुध्	जानने की इच्छा करना	बुध्यते	बुभुत्सते
भुज्	खाने की इच्छा करना	भुञ्जते	बुभुक्षते
भू	होने की इच्छा करना	भवति	बभूषति
मुच्	छुटने की इच्छा करना	मुञ्चते	मुमुक्षते
मृ	मरने की इच्छा करना	म्रियते	मुमूर्षते
लभ्	पाने की इच्छा करना	लभते	लिप्सते

पाठगत प्रश्न 25.3

1. तन् धातु से सन् प्रत्यय करने पर कितने रूप होते हैं और वे कौन से हैं?
2. स्वप्तुमिच्छति इस अर्थ में स्वप्धातु से सन् प्रत्यय करने पर क्या रूप होता है?
3. रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इससे क्या विधान होता है?
4. रुरुदिषति इसका क्या अर्थ है?
5. सनीवन्तादि सूत्र को पूरा कीजिए।
6. एतुमिच्छति इस अर्थ में इधातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या रूप होता है?
7. सनि च यह किस प्रकार का सूत्र है। अतिदेशसूत्र अथवा विधिसूत्र?

पाठ का सार

भ्वादि से चुरादिगण तक जो दसगणीय धातुएं हैं उन धातुओं से इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय होता है। उस सन्नन्त शब्द की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) से धातु संज्ञा होती है। जैसे पठ् व्यक्तायां वाचि इस मूलधातु से सन् प्रत्यय करने पर पिपठिषति यह रूप बनेगा। यहाँ पिपठिष की धातुसंज्ञा होती है। मूल धातु पठ् इसकी भूवादयो धातव (१.३.१) से धातु संज्ञा होती है यह विशेष जानना चाहिए। सन् के परे या सन् से विभिन्न कार्य होते हैं। जैसे इगन्त धातु से परे झलादि सन् प्रत्यय को किद्वद्भाव होकर उससे चिकीर्षति जैसे स्थानो पर गुणनिषेध होता है। क्वचित् सन् को इडागम नहीं होता उससे जुघुक्षति, जिघृक्षति यहाँ गुण नहीं होता। अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है सकारादि सन् प्रत्यय के परे होने पर उससे मोक्षते, मुमुक्षते वा वत्सः स्वयमेव यह सिद्ध होता है। तन् धातु की उपधा को झलादि सन् से दीर्घ होता है उससे तितासति, तितसति, तितनिषति ऐसे तीन पद सिद्ध होते हैं। गत्यर्थत गम् धातु से सन् प्रत्यय से गमि आदेश होगा परन्तु वह बोधनार्थ में नहीं होगा। अतः जिगमिषति ऐसा रूप सिद्ध होता है। किन्तु इ धातु के स्थान पर गमि आदेश होकर अधिजिगांसते यह रूप सिद्ध होता है। यहाँ प्रक्रिया सौकर्य के लिए पठितुम् इच्छति इस विग्रह में पठ् धातु से सन्नन्त में पिपठिषति इस रूप की निष्पत्ति कैसे होती है यह सब यहाँ स्पष्ट किया गया हैं।

पाठांत प्रश्न

1. सनाद्यन्ता धातव इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. पिपठिषति इस सन्नन्तधातुरूप की सिद्धि कैसे होती है यह व्याख्या कीजिए।

3. 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
4. अधिजिगांसते इस सन्नन्तधातुरूप की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
5. 'सनि ग्रहगुहोश्च' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
6. 'रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. 'किरश्च पञ्चभ्यः' इस सूत्र में स्थित उदाहरणों की व्याख्या कीजिए।
8. 'सनीवन्तर्धभ्रस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
9. 'मुचोऽकर्मकस्य गुणो वा' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
10. रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

25.1

1. मूलधातु-पठ्, सन्नन्तधातु-पिपठिष।
2. सनाद्यन्ता धातवः।
3. इच्छार्थ में।
4. नहीं।
5. पठितुम् इच्छति।
6. जिघत्सति।
7. अज्झनगमां सनि।
8. गुणनिषेध।
9. सन्-क्यच्-काम्यच्-क्यङ्-क्यषोऽथाचारक्विब्-णिज्-यडौ तथा। यगायेयङ्-णि चेति द्वादशाऽमी सनादयः।।
10. बुभूषति।

25.2

1. सन् परे होने पर इड् धातु के स्थान पर गमि यह आदेश होता है यह अर्थ है।
2. इण्धातु के स्थान पर गमि यह आदेश होता है सन्प्रत्यय परे होने पर। किन्तु बोधनार्थ में नहीं।

3. पिपृच्छति।
4. इडागम होता है।
5. किंवद्भाव।
6. जिघृक्षति।
7. जुघुक्षति।
8. अनित्य।

25.3

1. तितासति, तितंसति, तितनिषति ये रूपत्रय।
2. सुषुप्सति।
3. सन्-क्त्वा इन दोनों का कित्त्व।
4. रोदितुमिच्छति।
5. सनीवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्।
6. जिगमिषति।
7. विधिसूत्र।

॥ पच्चीसवां पाठ समाप्त॥